AMOGHVARTA

ISSN : 2583-3189

वर्तमान भारतीय लोकतंत्र के संदर्भ में गोपाल कृष्ण गोखले और बाल गंगाधर तिलक के राजनीतिक विचारों में जन सहभागिता: एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

ORIGINAL ARTICLE



Authors

दीपक कुमार दीक्षित
शोधार्थी

प्रो. (डॉ.) अभिलाख सिंह नरवरिया
शोध निर्देशक
राजनीति विज्ञान विभाग
मालवांचल विश्वविद्यालय
इन्दौर, मध्य प्रदेश, भारत

प्रो. (डॉ.) आदित्य कुमार सिंह
सह–शोध निर्देशक
विभागध्यक्ष, राजनीति विज्ञान विभाग
स्वामी शुकदेवानन्द कॉलेज
शाहजहाँपुर, उत्तर प्रदेश, भारत

शोध सार

जन भागीदारी लोकतांत्रिक शासन का एक मूलभूत तत्व है। भारतीय लोकतंत्र न केवल समय–समय पर होने वाले चुनावों पर बल्कि राजनीतिक, सामाजिक और सार्वजनिक मामलों में नागरिकों की निरंतर भागीदारी पर भी आधारित है। गोपाल कृष्ण गोखले (1866–1915) और बाल गंगाधर तिलक (1856–1920) के राजनीतिक विचार भारत में सार्वजनिक भागीदारी के विकास पर महत्वपूर्ण ऐतिहासिक दृष्टिकोण प्रदान करते हैं। गोखले ने उदारवादी संवैधानिक राजनीति की वकालत की और माना कि राजनीतिक प्रगति के लिए शिक्षा, सामाजिक सुधार, संस्थागत विकास और जिम्मेदार नागरिकता की आवश्यकता है। तिलक ने अधिक मुखर दृष्टिकोण अपनाया और राष्ट्रवाद को एक जन राजनीतिक आंदोलन में बदलने की कोशिश की इसलिए उनके मतभेद सार्वजनिक भागीदारी के दो आयामों को समझने के लिए एक मूल्यवान रूपरेखा प्रदान करते हैं। गोखले ने संवैधानिक तरीकों, राजनीतिक शिक्षा, सामाजिक सुधार, संवाद और प्रतिनिधि संस्थाओं के क्रमिक विस्तार पर बल दिया इसके विपरीत, तिलक ने बड़े पैमाने पर राजनीतिक लामबंदी, राजनीतिक चेतना, मुखर और स्वतंत्रता आंदोलन में प्रत्यक्ष सार्वजनिक भागीदारी को बढ़ावा दिया। प्रस्तुत शोधपत्र विश्लेषणात्मक रूप से सार्वजनिक भागीदारी के प्रति उनके दृष्टिकोण की जांच करता है और समकालीन भारतीय लोकतंत्र के लिए उनकी प्रासंगिकता का मूल्यांकन करता है।

मुख्य शब्द

गोपाल कृष्ण गोखले, बाल गंगाधर तिलक, जन भागीदारी, राजनीतिक चेतना, राष्ट्रवाद, स्वशासन.

लोकतांत्रिक राजनीतिक व्यवस्था के कामकाज में जनता की भागीदारी केंद्रीय है। लोकतंत्र तब सार्थक हो जाता है जब नागरिक न केवल मतदाता के रूप में बल्कि सार्वजनिक बहस, नीति प्रक्रियाओं, नागरिक समाज की गतिविधियों, स्थानीय शासन और जवाबदेही के तंत्र में भी भाग लेते हैं। भारतीय संदर्भ में, राष्ट्रवादी आंदोलन ने लोगों

को राजनीतिक रूप से संगठित करने के लिए विभिन्न दृष्टिकोण बनाए। गोपाल कृष्ण गोखले और बाल गंगाधर तिलक ने भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन के भीतर दो प्रभावशाली धाराओं का प्रतिनिधित्व किया।

गोखले भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के प्रमुख उदारवादी राष्ट्रवादी नेताओं में से एक थे। उनका राजनीतिक दर्शन संवैधानिकता, क्रमिक सुधार, राजनीतिक शिक्षा, सामाजिक जिम्मेदारी और शांतिपूर्ण लोकतांत्रिक तरीकों पर आधारित था। सार्वजनिक भागीदारी ने उनके राजनीतिक चिंतन में एक महत्वपूर्ण स्थान रखा क्योंकि गोखले का मानना था कि स्वशासन की सफलता न केवल राजनीतिक संस्थानों पर बल्कि राजनीतिक जागरूकता और नागरिकों की सक्रिय भागीदारी पर भी निर्भर करती है। उन्होंने प्रतिनिधि संस्थाओं के विस्तार, जनता की शिक्षा और नागरिक चेतना के विकास की वकालत की। गोपाल कृष्ण गोखले औपनिवेशिक भारत के एक महत्वपूर्ण उदारवादी राष्ट्रवादी और उदार राजनीतिक विचारक थे। वह उस पीढ़ी से थे जो संवैधानिक और शांतिपूर्ण तरीकों के माध्यम से भारतीय राजनीतिक चेतना को विकसित करना चाहते थे। ब्रिटिश शासन के साथ सीधे टकराव के पक्षधर क्रांतिकारी राष्ट्रवादियों के विपरीत, गोखले का मानना था कि राजनीतिक स्वतंत्रता संस्थागत सुधारों, शिक्षा और लोकतांत्रिक क्षमताओं के क्रमिक विकास के माध्यम से विकसित होनी चाहिए।

गोखले के लिए, राजनीतिक भागीदारी का राजनीतिक शिक्षा से गहरा संबंध था। उनका मानना था कि एक लोकतांत्रिक समाज को ऐसे नागरिकों की आवश्यकता होती है जो अपने अधिकारों, कर्तव्यों और जिम्मेदारियों को समझते हों इसलिए सार्वजनिक भागीदारी केवल मतदान करने या राजनीतिक बैठकों में भाग लेने का कार्य नहीं थी इसमें नागरिक चेतना विकसित करना और सार्वजनिक मामलों में रचनात्मक योगदान देना शामिल था।

गोपाल कृष्ण गोखलेः सार्वजनिक भागीदारी पर दृष्टिकोण

गोपाल कृष्ण गोखले राजनीतिक शिक्षा को लोकतांत्रिक विकास के लिए एक आवश्यक आधार मानते थे। उनका मानना था कि भारतीयों को प्रतिनिधि संस्थानों में भाग लेने के लिए अधिक राजनीतिक जागरूकता और अवसरों की आवश्यकता है। उनके दृष्टिकोण ने संवैधानिक तरीकों, विधायी बहस, याचिकाओं, सार्वजनिक चर्चा और क्रमिक राजनीतिक सुधार पर जोर दिया। गोखले के लिए, भागीदारी जिम्मेदार नागरिकता के साथ घनिष्ठ रूप से जुड़ी हुई थी। वे राजनीतिक स्वतंत्रता को केवल सत्ता का हस्तांतरण नहीं मानते थे, बल्कि, उन्होंने स्वशासन के लिए आवश्यक नागरिक क्षमताओं के विकास पर जोर दिया। 1905 में स्थापित सर्वेंट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी के माध्यम से, उन्होंने सार्वजनिक सेवा और राजनीतिक शिक्षा के लिए प्रतिबद्ध व्यक्तियों का एक कैडर बनाने का प्रयास किया।

गोखले का दृष्टिकोण वर्तमान भारतीय लोकतंत्र के लिए काफी प्रासंगिक है। समकालीन लोकतंत्र को ऐसे नागरिकों की आवश्यकता है जो संवैधानिक मूल्यों, सार्वजनिक नीतियों, अधिकारों, कर्तव्यों और लोकतांत्रिक संस्थानों को समझते हों। चुनाव, सार्वजनिक परामर्श, स्थानीय स्वशासन, नागरिक समाज संगठनों और सूचित राजनीतिक चर्चा के माध्यम से भागीदारी गोखले के विचार के इस पहलू को दर्शाती है हालाँकि, एक विशेष रूप से क्रमिकवादी दृष्टिकोण कभी–कभी हाशिए पर रहने वाले समूहों की भागीदारी को सीमित कर सकता है जिनके हितों के लिए मजबूत राजनीतिक लामबंदी की आवश्यकता होती है इसलिए, गोखले के संस्थागत दृष्टिकोण को लोकप्रिय जुड़ाव के व्यापक तंत्र द्वारा पूरक करने की आवश्यकता है।

गोखले के राजनीतिक विचार में जनता की भागीदारी

गोखले की सार्वजनिक भागीदारी की अवधारणा को कई परस्पर जुड़े आयामों के माध्यम से समझा जा सकता हैः

1. **भागीदारी की नींव के रूप में राजनीतिक शिक्षाः** गोखले ने राजनीतिक रूप से जागरूक नागरिक बनाने के लिए शिक्षा को आवश्यक माना। उन्होंने आधुनिक शिक्षा के विस्तार का पुरजोर समर्थन किया क्योंकि अशिक्षित आबादी सार्वजनिक मामलों में प्रभावी ढंग से भाग नहीं ले सकती थी। 1905 में स्थापित

सर्वेंट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी के साथ उनका जुड़ाव, सार्वजनिक सेवा और राष्ट्रीय विकास के लिए व्यक्तियों को प्रशिक्षित करने की उनकी प्रतिबद्धता को दर्शाता है। उनका मानना था कि शिक्षित नागरिक राजनीतिक समस्याओं को बेहतर ढंग से समझने, सरकारी नीतियों का मूल्यांकन करने और राजनीतिक संस्थानों में जिम्मेदारी से भाग लेने में सक्षम होंगे। इस प्रकार, उनके लिए राजनीतिक शिक्षा सार्थक लोकतंत्र के लिए एक शर्त थी।

2. **संवैधानिक तरीके और प्रतिनिधि संस्थाएँ**: गोखले संवैधानिक राजनीति में काफी विश्वास रखते थे। इंपीरियल लेजिस्लेटिव काउंसिल के सदस्य के रूप में, उन्होंने विधायी बहस, आलोचना और सार्वजनिक प्रतिनिधित्व को राजनीतिक सुधार के साधन के रूप में इस्तेमाल किया। उनका मानना था कि भारतीयों को धीरे–धीरे विधायी और प्रशासनिक संस्थानों में अधिक प्रतिनिधित्व मिलना चाहिए। उनका दृष्टिकोण इंगित करता है कि प्रतिनिधि निकायों के माध्यम से सार्वजनिक भागीदारी को संस्थागत बनाया जा सकता है। विधान परिषदें भारतीय नेताओं को सार्वजनिक शिकायतों को स्पष्ट करने और सरकारी नीति को प्रभावित करने का अवसर प्रदान कर सकती हैं।
3. **राजनीतिक भागीदारी एवं स्वशासन**: गोखले ने स्वशासन को तैयारी की आवश्यकता वाली एक क्रमिक प्रक्रिया के रूप में देखा। वे स्वतंत्रता को केवल राजनीतिक सत्ता का हस्तांतरण नहीं मानते थे, बल्कि, इसके लिए नागरिकों में लोकतांत्रिक आदतों के विकास की आवश्यकता थी। परिणामस्वरूप स्थानीय निकायों, विधायी संस्थानों, सार्वजनिक संघों और नागरिक संगठनों में भागीदारी महत्वपूर्ण थी। ऐसी भागीदारी भारतीयों को स्वशासन की जिम्मेदारियों में प्रशिक्षित कर सकती है और स्वयं शासन करने की उनकी क्षमता को मजबूत कर सकती है।
4. **जनता की राय और सरकार की जवाबदेही**: गोखले ने एक सूचित और संगठित जनमत के महत्व को पहचाना। समाचार पत्रों, सार्वजनिक बैठकों, संघों और राजनीतिक संगठनों ने लोगों की चिंताओं को सरकार तक पहुंचाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उनकी राजनीतिक गतिविधियाँ दर्शाती हैं कि वे सरकारी नीति की आलोचना को सार्वजनिक जीवन का एक वैध घटक मानते थे इसलिए जनता की राय अधिकारियों को जवाबदेह बनाने और प्रशासनिक सुधारों को प्रोत्साहित करने के साधन के रूप में कार्य कर सकती है।
5. **सामाजिक सुधार एवं समावेशी भागीदारी**: गोखले ने राजनीतिक प्रगति को सामाजिक प्रगति से अलग नहीं किया। उनका मानना था कि गरीबी, अशिक्षा और सामाजिक पिछड़ेपन ने लोगों की सार्वजनिक जीवन में प्रभावी ढंग से भाग लेने की क्षमता को सीमित कर दिया है। परिणामस्वरूप, सक्रिय नागरिकता तैयार करने के लिए शिक्षा, सामाजिक सुधार और आर्थिक विकास आवश्यक थे। उनका दृष्टिकोण यह भी दर्शाता है कि लोकतांत्रिक भागीदारी को राजनीतिक संस्थानों से आगे बढ़ना चाहिए। नागरिकों को सामाजिक कल्याण और राष्ट्रीय विकास की दिशा में निर्देशित गतिविधियों में भाग लेना चाहिए।

बाल गंगाधर तिलक: सार्वजनिक भागीदारी पर दृष्टिकोण

बाल गंगाधर तिलक (1856 –1920) भारतीय राष्ट्रवाद के इतिहास में एक प्रमुख स्थान हैं। जन राष्ट्रवाद के शुरुआती वास्तुकारों में से उनको प्रसिद्धि है, तिलक ने भारतीय राजनीति को एक अभिजात वर्ग उन्मुख गतिविधि से व्यापक जन आंदोलन में बदल दिया। उनके राजनीतिक विचारों ने स्वराज, राष्ट्रीय चेतना, राजनीतिक शिक्षा, सामूहिक कार्रवाई और आम लोगों की सक्रिय भागीदारी पर जोर दिया। आम तौर पर संवैधानिक तरीकों, याचिकाओं और औपनिवेशिक सरकार से अपील करने वाले उदारवादी नेताओं के विपरीत, तिलक का मानना था कि राजनीतिक स्वतंत्रता केवल तभी प्राप्त की जा सकती है जब लोग स्वयं राजनीतिक रूप से जागरूक हो जाएं और राष्ट्रीय आंदोलन में सक्रिय रूप से भाग लेने लगेंगे, उनकी प्रसिद्ध घोषणा, ''स्वराज मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है और मैं इसे लेकर रहूंगा'' ने राजनीतिक और जनमानस की भावना पर कब्जा कर लिया जो उनके विचार की विशेषता थी।

तिलक के राजनीतिक विचार में सार्वजनिक भागीदारी की अवधारणा

बाल गंगाधर तिलक के लिए, जन भागीदारी केवल मतदान करने या औपचारिक राजनीतिक संस्थानों में भाग लेने का कार्य नहीं था बल्कि औपनिवेशिक शासन के दौरान, भारतीयों के पास चुनावी भागीदारी के लिए बहुत सीमित अवसर थे इसलिए तिलक ने भागीदारी को अधिक व्यापक रूप से राजनीतिक जागृति, सामूहिक जुटाव, जनमत, संगठन और अन्यायपूर्ण प्राधिकरण के प्रतिरोध के रूप में समझा। उनका मानना था कि राजनीतिक शक्ति अंततः लोगों की ताकत और चेतना पर निर्भर करती है।

उन्होंने भारतीय आबादी को निष्क्रिय विषयों से स्वशासन के संघर्ष में सक्रिय प्रतिभागियों में बदलने की मांग की। उनकी राजनीति ने इस बात पर बल दिया कि राष्ट्रीय स्वतंत्रता केवल शिक्षित अभिजात वर्ग के प्रयासों के माध्यम से प्राप्त नहीं की जा सकती है, इसके लिए छात्रों, श्रमिकों, व्यापारियों, किसानों, महिलाओं और समाज के अन्य वर्गों की भागीदारी की भी आवश्यकता है।

राजनीतिक शिक्षा और जागृति

राजनीतिक शिक्षा वह महत्वपूर्ण साधन है जिसके माध्यम से तिलक ने जन भागीदारी को बढ़ावा दिया। 'केसरी' और 'द मराठा' जैसे समाचार पत्रों के माध्यम से उन्होंने भारतीयों के मध्य राजनीतिक जागरूकता विकसित करने का प्रयास किया। उन्होंने औपनिवेशिक नीतियों की आलोचना करने, राजनीतिक विकास की व्याख्या करने और लोगों को उनके सामूहिक हितों को पहचानने के लिए प्रोत्साहित करने के लिए पत्रकारिता का इस्तेमाल किया। तिलक यह समझते थे कि राजनीति से दूर जनमानस, राजनीति में प्रभावी रूप से भाग नहीं ले सकते, इसलिए उन्होंने राष्ट्रीय लामबंदी के लिए राजनीतिक चेतना को एक पूर्व शर्त के रूप में माना। उनका दृष्टिकोण दर्शाता है कि सार्वजनिक भागीदारी अधिकारों, जिम्मेदारियों और राजनीतिक शक्ति के बारे में जागरूकता के साथ शुरू होती है।

मास मोबिलाइजेशन के लिए सांस्कृतिक प्रतीकों का उपयोग

तिलक का सबसे महत्वपूर्ण योगदान राजनीतिक लामबंदी के उपकरणों के रूप में सांस्कृतिक और धार्मिक त्योहारों का उनका अभिनव उपयोग किया। उन्होंने गणपति महोत्सव को एक सार्वजनिक उत्सव में बदल दिया और ऐतिहासिक चेतना और देशभक्ति को विकसित करने के साधन के रूप में शिवाजी महोत्सव को बढ़ावा दिया। इन त्योहारों ने वह सार्वजनिक मंच प्रदान किया जहां विभिन्न सामाजिक समूहों के लोग इकट्ठा हो सकते हैं, संवाद कर सकते हैं और सामूहिक पहचान की भावना विकसित कर सकते हैं। इस प्रकार तिलक ने पारंपरिक रूप से निजी या स्थानीयकृत सांस्कृतिक प्रथाओं को सार्वजनिक जुड़ाव के लिए मंचों में परिवर्तित कर दिया।

इस रणनीति ने आलोचना को भी आकर्षित किया है। कुछ विद्वानों का तर्क है कि हिंदू सांस्कृतिक प्रतीकों का उपयोग समावेशी राजनीतिक जुटाव के लिए सीमाएं पैदा कर सकता है, विशेष रूप से मुसलमानों और अन्य समुदायों के बीच। इस प्रकार, तिलक की यह रणनीति बड़े पैमाने पर राजनीतिक चेतना उत्पन्न करने में अत्यधिक प्रभावी हुई, लेकिन एक समावेशी राष्ट्रीय पहचान के विचार से संबंधित कुछ तनाव भी थे। स्वदेशी, बहिष्कार और सक्रिय प्रतिरोध तिलक ने जनता की भागीदारी के साधन के रूप में स्वदेशी, बहिष्कार, राष्ट्रीय शिक्षा और निष्क्रिय प्रतिरोध का दृढ़ता से समर्थन किया। उनकी राजनीतिक रणनीति ने लोगों को प्रतिदिन के आर्थिक और सामाजिक विकल्पों के माध्यम से राष्ट्रवादी आंदोलन में सीधे भाग लेने के लिए प्रोत्साहित किया। उदाहरण के लिए, विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार ने उपभोक्ताओं को राजनीतिक अभिनेताओं में बदल दिया। इसी तरह, स्वदेशी ने भारतीयों को स्वदेशी उद्योगों का समर्थन करने और आर्थिक आत्मनिर्भरता विकसित करने के लिए प्रोत्साहित किया। इन तरीकों ने तिलक की समझ को प्रदर्शित किया कि राजनीतिक भागीदारी औपचारिक राजनीतिक संस्थानों के बाहर हो सकती है इसलिए उनके दृष्टिकोण ने राजनीति का अर्थ व्यापक कर दिया। राजनीति विधायिकाओं या संवैधानिक वार्ताओं तक ही सीमित नहीं थी बल्कि इसे सामूहिक सामाजिक और आर्थिक कार्रवाई के माध्यम से भी व्यक्त किया जा सकता था। स्वराज और राजनीतिक भागीदारी स्वराज की अवधारणा तिलक के राजनीतिक विचार के केंद्र में थी।

तिलक लिए स्वराज ने ब्रिटिश अधिकारियों से भारतीय अभिजात वर्ग को प्रशासनिक आकार के हस्तांतरण से अधिक प्रतिनिधित्व किया। इसने भारतीयों के स्वयं पर शासन करने के अधिकार को निहित किया। स्वराज पर तिलक के जोर ने आम लोगों को भारत के राजनीतिक भविष्य में खुद को हितधारक के रूप में देखने के लिए प्रोत्साहित किया इसलिए उनकी राजनीति में एक महत्वपूर्ण लोकतांत्रिक सिद्धांत था, वैध सरकार को अंततः लोगों की इच्छा और भागीदारी को प्रतिबिंबित करना चाहिए। उसी समय तिलक के राजनीतिक विचार औपनिवेशिक भारत की परिस्थितियों से उपजे थे उनका प्राथमिक उद्देश्य राष्ट्रीय मुक्ति था और लोकतांत्रिक भागीदारी की विस्तृत संस्थागत संरचना से संबंधित प्रश्नों पर स्वशासन प्राप्त करने के तत्काल लक्ष्य की तुलना में अपेक्षाकृत कम ध्यान दिया गया।

विश्लेषणात्मक मूल्यांकन

गोखले की सार्वजनिक भागीदारी की अवधारणा की प्रमुख ताकत जिम्मेदार और जागरूक नागरिकता पर बल देना था। उन्होंने समझा कि नागरिक शिक्षा और सार्वजनिक जिम्मेदारी के बिना लोकतांत्रिक संस्थाएँ प्रभावी ढंग से कार्य नहीं कर सकतीं। उनके दृष्टिकोण ने हिंसक राजनीतिक तरीकों का एक रचनात्मक विकल्प भी प्रदान किया। गोखले का क्रमिकवादी दृष्टिकोण की सीमाएँ थीं, संवैधानिक सुधार और ब्रिटिश उदारवाद में उनके विश्वास की अधिक कट्टरपंथी राष्ट्रवादियों, विशेषकर बाल गंगाधर तिलक द्वारा आलोचना की गई। आलोचकों ने तर्क दिया कि क्रमिक सुधारों पर अत्यधिक निर्भरता पूर्ण राजनीतिक स्वतंत्रता की प्राप्ति में देरी कर सकती है फिर भी, शिक्षा, सार्वजनिक सेवा, संवैधानिक भागीदारी और जिम्मेदार नागरिकता पर गोखले के विचार लोकतांत्रिक सिद्धांत के लिए महत्वपूर्ण है।

जन भागीदारी में तिलक का सबसे बड़ा योगदान राष्ट्रवाद को एक जन राजनीतिक आंदोलन में बदलने की उनकी क्षमता थी। उन्होंने स्वीकार किया कि औपनिवेशिक शासन को केवल कुलीन याचिकाओं के माध्यम से प्रभावी ढंग से चुनौती नहीं दी जा सकती है। समाचार पत्रों, त्योहारों, स्वदेशी, बहिष्कार, सार्वजनिक सभाओं और राजनीतिक अभियानों का उपयोग करके, उन्होंने कई चैनल बनाए जिनके माध्यम से आम भारतीय भाग ले सकते थे फिर भी, उसके दृष्टिकोण की सीमाएँ थीं। हिंदू सांस्कृतिक प्रतीकों पर उनकी निर्भरता ने कभी – कभी सांप्रदायिक समावेश के बारे में चिंता जताई। इसके अलावा, उनकी टकराव की राजनीतिक रणनीति राजनीतिक ध्रुवीकरण और औपनिवेशिक प्रशासन के साथ संघर्ष पैदा कर सकती है। इन सीमाओं के बावजूद भी तिलक के राजनीतिक विचारों ने अभिजात वर्ग की राजनीति के समक्ष संकट उत्पन्न किया। उनके तरीकों ने इस सिद्धांत को स्थापित करने में मदद की कि राजनीतिक स्वतंत्रता के लिए नागरिकों की सक्रिय भागीदारी आवश्यक है।

समकालीन प्रासंगिकता

गोखले के विचारों की समकालीन भारतीय लोकतंत्र में काफी प्रासंगिक है। आधुनिक लोकतंत्र को न केवल चुनावों के माध्यम से बल्कि सार्वजनिक परामर्श, नागरिक समाज संगठनों, स्थानीय शासन, सार्वजनिक सुनवाई, सामाजिक आंदोलनों और डिजिटल प्लेटफार्मों के माध्यम से भी भागीदारी की आवश्यकता है। गलत सूचना और राजनीतिक रूप से ध्रुवीकृत सार्वजनिक चर्चा के युग में राजनीतिक शिक्षा पर उनका जोर विशेष रूप से प्रासंगिक है। नीतियों के मूल्यांकन और निर्वाचित प्रतिनिधियों को जवाबदेह बनाए रखने के लिए एक सूचित नागरिक वर्ग आवश्यक है। इसी तरह, सार्वजनिक सेवा और नागरिक जिम्मेदारी पर उनका जोर लोकतांत्रिक संस्थानों और सहभागी शासन को मजबूत कर सकता है।

तिलक के विचार समकालीन लोकतांत्रिक राजनीति के लिए प्रासंगिक हैं। आधुनिक लोकतंत्र के लिए नागरिकों को न केवल मतदान करने की आवश्यकता होती है, बल्कि सार्वजनिक बहस, नागरिक समाज संगठनों, सामाजिक आंदोलनों, सामुदायिक गतिविधियों और नीतिगत चर्चाओं में शामिल होने की भी आवश्यकता होती है। गलत सूचना और डिजिटल राजनीतिक संचार के युग में राजनीतिक शिक्षा पर उनका जोर विशेष रूप से प्रासंगिक है साथ ही समकालीन लोकतंत्र के लिए भागीदारी को समावेशी, संवैधानिक, शांतिपूर्ण और विविधता का सम्मान करने

की आवश्यकता होती है इसलिए राजनीतिक पहचान के बहिष्करणकारी रूपों से बचते हुए, जन आंदोलन पर तिलक के विचारों को आधुनिक लोकतांत्रिक परिस्थितियों के अनुरूप देखा जा सकता हैं। बाल गंगाधर तिलक ने भारतीय राष्ट्रवाद को व्यापक जन आंदोलन में बदलने में प्रमुख भूमिका निभाई। उनका प्रसिद्ध कथन, ''स्वराज मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है...'' राजनीतिक स्वतंत्रता और लोकप्रिय राजनीतिक चेतना पर उनके जोर को दर्शाता है। नरमपंथियों के विपरीत, तिलक का मानना था कि सक्रिय सार्वजनिक लामबंदी के माध्यम से राजनीतिक दबाव उत्पन्न किया जा सकता है।

समकालीन भारतीय लोकतंत्र को दोनों दृष्टिकोणों की आवश्यकता है। चुनाव भागीदारी का सबसे स्पष्ट रूप प्रदान करते हैं, लेकिन लोकतांत्रिक भागीदारी मतदान से परे तक फैली हुई है। नागरिक सोशल मीडिया, सार्वजनिक अभियानों, स्थानीय शासन, नागरिक समाज संगठनों, सार्वजनिक परामर्श और जमीनी स्तर के आंदोलनों के माध्यम से तेजी से जुड़ रहे हैं।

शिक्षा पर गोखले का जोर राजनीतिक गलत सूचना से निपटने और संवैधानिक साक्षरता को बढ़ावा देने के लिए प्रासंगिक है। नागरिकों को राजनीतिक दावों और सार्वजनिक नीतियों का आलोचनात्मक मूल्यांकन करने की क्षमता की आवश्यकता है। इसी तरह, सामूहिक राजनीतिक चेतना पर तिलक का जोर नागरिकों को सामूहिक मुद्दों को उठाने और राजनीतिक संस्थानों से जवाबदेही की मांग करने के लिए प्रोत्साहित करने के लिए प्रासंगिक है।

निष्कर्ष

बाल गंगाधर तिलक ने भारतीय राजनीतिक विचारों में जन भागीदारी के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया स्वराज, राजनीतिक शिक्षा, जन आंदोलन, स्वदेशी, बहिष्कार, पत्रकारिता और सार्वजनिक त्यौहारों पर जोर देकर, उन्होंने आम भारतीयों की राजनीतिक भूमिका का विस्तार किया। उनकी मूलभूत अंतर्दृष्टि यह थी कि लोगों को जागरूक और सक्रिय राजनीतिक प्रतिभागियों में परिवर्तित किए बिना राष्ट्रीय स्वतंत्रता प्राप्त नहीं की जा सकती। यद्यपि उनकी जुटाने की रणनीति के कुछ पहलू समावेशिता के बारे में सवाल उठाते हैं, लेकिन सामूहिक राजनीति के विकास में उनका योगदान ऐतिहासिक रूप से महत्वपूर्ण है इसलिए तिलक का राजनीतिक विचार भारत में नागरिकता, राजनीतिक चेतना, सामूहिक कार्रवाई और लोकतांत्रिक भागीदारी के बीच संबंधों को समझने के लिए एक महत्वपूर्ण आधार प्रदान करता हैं।

तिलक ने आम लोगों में राजनीतिक जागरूकता पैदा करने के लिए समाचार पत्रों, सार्वजनिक उत्सवों, राजनीतिक अभियानों और स्वदेशी संस्थानों का इस्तेमाल किया। गणपति उत्सवों और शिवाजी उत्सवों के सार्वजनिक उत्सव ने सांस्कृतिक स्थानों को राजनीतिक संचार और सामूहिक लामबंदी के मंच में बदलने में मदद की इसलिए उनकी राजनीति ने राष्ट्रवाद के सामाजिक आधार का विस्तार किया।

73वें और 74वें संवैधानिक संशोधन, जिसने पंचायती राज संस्थाओं और शहरी स्थानीय निकायों को मजबूत किया, जमीनी स्तर पर भागीदारी के लिए संस्थागत अवसर प्रदान करते हैं। इसी तरह, सार्वजनिक सुनवाई, सामाजिक ऑडिट, सूचना का अधिकार, नागरिक अभियान और डिजिटल गवर्नेंस प्लेटफॉर्म जैसे उपकरण सहभागी लोकतंत्र के बढ़ते महत्व को प्रदर्शित करते हैं।

तिलक का दृष्टिकोण समकालीन प्रासंगिकता रखता है क्योंकि लोकतांत्रिक राजनीति के लिए नागरिकों को संगठित होने, मांगें व्यक्त करने, सार्वजनिक अभियानों में भाग लेने और सरकारों को जवाबदेह बनाने की आवश्यकता होती है। आधुनिक नागरिक समाज आंदोलनों, शांतिपूर्ण प्रदर्शनों, सामाजिक अभियानों, डिजिटल राजनीतिक संचार और मुद्दा–आधारित नागरिक लामबंदी की जांच तिलक से जुड़ी भागीदारी राजनीति के व्यापक ढांचे के माध्यम से की जा सकती है फिर भी यदि राजनीतिक भागीदारी अत्यधिक भावनात्मक, ध्रुवीकृत या बहुसंख्यकवादी आवेगों से प्रेरित हो जाए तो जन लामबंदी की सीमाएँ हो सकती हैं इसलिए, लामबंदी पर तिलक का जोर संवैधानिकता, बहुलवाद और लोकतांत्रिक संस्थानों के प्रति सम्मान द्वारा संतुलित होना चाहिए। एक प्रभावी लोकतांत्रिक प्रणाली

के लिए गोखले की सूचित, संवैधानिक और जिम्मेदार भागीदारी के साथ तिलक की सक्रिय, संगठित और जन–आधारित राजनीतिक भागीदारी, आवश्यक है।

सन्दर्भ सूची

1. सिंघल, एस. सी. (2001) *आधुनिक भारतीय राजनीतिक विचार.* साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा।
2. फड़िया, बी.एल. (2007) *आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिंतन.* साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा।
3. दुर्गादास (2000) *भारत का कर्जन से नेहरू और उसके पश्चात.* रिसर्च पब्लिकेशन, जयपुर।
4. पार्वते, टी.वी. (1959) *गोपाल कृष्ण गोखले.* नवजीवन पब्लिकेशन हाउस, अहमदाबाद।
5. सावरकर, वीर विनायक दामोदर (1939) *1857 भारतीय स्वतंत्रता समर.* हिंदू मिशन पुस्तक भंडार, दिल्ली।
6. राय, लाला लाजपत (2000) *यंग इंडिया.* रिसर्च पब्लिकेशन, जयपुर।
7. सिंह, निहाल गुरमुख (1980) *भारत का वैधानिक एवं राष्ट्रीय विकास.* साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा।
8. गोपाल, डॉ. राम (1959) *भारतीय राजनीति.* एशिया पब्लिशिंग हाउस, मुंबई।
9. मुंशी, डॉ.के.एन.(1962) *इवेंट ऑफ इंडिपेंडेंस.* साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा।
10. शिरोल, के. बी .वैलेंटाइन (1980) *इंडियन अनरेस्ट.* साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा।
11. सिंह, जी. एन. (1980) *भारत का वैधानिक एवं राष्ट्रीय विकास.* साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा।
12. बंद्योपाध्याय, एस. (2004) *प्लासी से विभाजन तक और उसके बादः आधुनिक भारत का इतिहास.* ओरिएंट लॉन्गमैन पब्लिकेशन, हैदराबाद।
13. चंद्रा, बी. (1989) *भारत का स्वतंत्रता संग्राम, 1857–1947.* पेंगुइन पुस्तक पब्लिकेशन, गुरूग्राम, हरियाणा।
14. चंद्रा, बी.; मुखर्जी, एम.; मुखर्जी, ए.; पणिक्कर, के.एन. और महाजन, एस. (1988) *स्वतंत्रता के लिए भारत का संघर्ष,* पेंगुइन पुस्तक पब्लिकेशन, गुरूग्राम।
15. गोखले, जी.के. (1916) *माननीय श्री गोपाल कृष्ण गोखले के भाषण और लेख.* रानाडे संस्थान, पुणे।
16. हार्डीमैन, डी. (1993) *देवी का आगमनः पश्चिमी भारत में आदिवासी दावा.* ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, आगरा।
17. कीर, डी. (1959) *लोकमान्य तिलकः भारतीय क्रांति के जनक.* लोकप्रिय प्रकाशन, मुंबई।

––==00==––